दक्षिण की सरस्वती
चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य

कृपया यह ग्रन्थ नीचे निर्देशित तिथि के पूर्व अथवा उक्त तिथि तक वापस कर दें। विलम्ब से लौटाने पर प्रतिदिन दस पैसे विलम्ब शुल्क देना होगा।

दक्षिण
की
सरस्वती

तमिल की महान कवयित्री औवै का जीवन-परिचय तथा पद

लेखक
चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य

हिन्दी रूपान्तर
लक्ष्मी देवदास गांधी
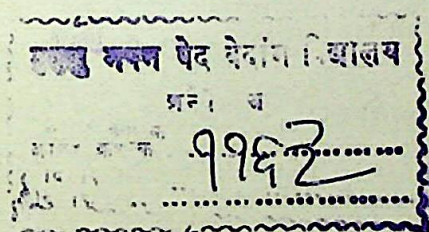
१९७२

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय,
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल,
नई दिल्ली

•

पहली बार : १९७२
मूल्य
दो रुपये

•

मुद्रक
सा० प्रि० द्वारा
इंडिया प्रिंटर्स
दिल्ली

प्रकाशकीय

प्रस्तुत पुस्तक के विद्वान लेखक की गणना भारत के महान राज-नेताओं में की जाती है, लेकिन वह मूलतः साहित्यकार तथा आध्यात्मिक व्यक्ति हैं। उनकी 'महाभारत कथा' और 'दशरथनंदन श्रीराम', जो 'मण्डल' से प्रकाशित हुई हैं, साहित्य की अमर कृतियां हैं।

राजाजी ने और भी बहुत से साहित्य की रचना की है। इस सारे साहित्य के पीछे एक ही ध्येय है और वह यह कि हम अच्छे मनुष्य बनें, हमारा चरित्र ऊंचा हो।

इसी उद्देश्य से प्रस्तुत पुस्तक को उन्होंने लिखा है। इसमें तमिल की एक महान कवयित्री का परिचय है और उनके कुछ चुने हुए पद्यों का हिन्दी अनुवाद है।

पुस्तक रोचक तथा प्रेरणादायक है। हमें विश्वास है कि इसको सभी वर्गों तथा क्षेत्रों के पाठक चाव से पढ़ेंगे।

—मंत्री

विषय-सूची

दक्षिण
की
सरस्वती

दो शब्द

तमिल भाषा की प्राचीन कवयित्री औवै का परिचय मेरे पिता श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य ने करीब चालीस वर्ष पहले महात्मा गांधी के 'यंग इंडिया' पत्र के पाठकों को दिया था। औवै की लगभग पचपन कविताओं का सार इसमें आ गया था।

श्री० रा० के० चट्टियार ने पुराने 'यंग इंडिया' की फाइलों में से यह संग्रह ढूंढ़ निकाला और उसे एक पुस्तिका के रूप में प्रकाशित करके राजाजी के जन्म-दिन पर उसे उपहार के रूप में भेंट किया और लोगों को भी निःशुल्क बांटा। हाल में 'स्वराज्य' साप्ताहिक में भी यह प्रकाशित हुआ और लोगों को बहुत पसंद आया। राजाजी की इच्छा हुई कि उत्तर भारत-वासियों को भी औवै का परिचय हो। उस इच्छा की पूर्ति करने के लिए मैंने यह यत्न किया है।

श्री यशपालजी जैन ने औवै के पदों के मेरे अनुवाद को कविताओं का रूप देकर उनकी रोचकता को अक्षुण्ण बनाया है।

—लक्ष्मी देवदास गांधी

: १ :

औवै कौन थी ?

औवै एक महा विदुषी कवयित्री थी। 'आर' तमिल में आर-सूचक बहुवचन होता है। इसलिए इनको लोग औवे-न्यार कहने लगे। पर हम इनको 'औवै' के ही नाम से संबो-धन करेंगे।

चालीस वर्षों से भी कुछ अधिक हो गये होंगे, मैंने महात्मा गांधी के 'यंग इंडिया' में औवै के बारे में अंग्रेजी में लिखा था। मेरा उद्देश्य यह था कि तमिल प्रदेश के बाहर रहनेवालों को भी इस प्राज्ञा का परिचय मिले।

तमिल भारत की प्राचीनतम भाषाओं में से है। दक्षिण भारत के लगभग चार करोड़ लोगों के अतिरिक्त श्रीलंका तथा दुनिया के अन्य भागों में भी तमिल प्रचलित है। हिन्दी गुजराती, मराठी, बंगला और सिंहली भाषाएं संस्कृत से उत्पन्न हैं। तमिल, आंध्र की तेलुगु, कर्नाटक की कन्नड़ तथा केरल की मलयालम संस्कृत से भिन्न स्वतंत्र भाषाएं हैं, यद्यपि इन सभी भाषाओं में संस्कृत के अनेक शब्द और

विचारों का सरल समावेश हो गया है।

तमिल भाषा का साहित्य बहुत पुराना है। अति सुन्दर भी है। साहित्य के प्रति कई पाश्चात्य पंडित आकृष्ट हो चुके हैं। तिरुवल्लुवर का ग्रंथ 'कुरल' तो दुनियाभर में प्रसिद्ध है। कवि कंबन ने वाल्मीकि रामायण का तमिल में अद्भुत, सुन्दर एवं प्रामाणिक रूपान्तर किया है। तमिल साहित्य के प्रति न्याय करना हो तो पुरानी तथा आधुनिक कई साहित्यिक रचनाओं का उल्लेख हो सकता है। लेकिन मेरा उद्देश्य यहां पर तमिल साहित्य का परिचय देने का नहीं, किन्तु पाठकों को एक श्रेष्ठ कवयित्री औवै का परिचय देना है। औवै एक विदुषी मात्र नहीं थी। तमिल बालक-बालिकाओं के लिए वह सतत मित्र रही। प्रखर बुद्धि, असाधारण साहस, शील और विवेक, ये सब गुण औवै में मौजूद थे और इसी कारण वह दुनियाभर के साहित्य में निराली है।

तमिल प्रदेश के लोग औवै को देवी सरस्वती का अवतार मानते हैं। औवै के नाम से न कोई मन्दिर है, न कहीं उसकी मूर्ति की स्थापना हुई है। वह जो लिखकर गई है, उसका हर कोई तमिल व्यक्ति पाठ करता है। इसी ढंग से औवै पूजी चली आ रही है।

निस्सन्देह, तिरुवल्लुवर का स्थान तमिल साहित्य में सर्वोच्च है, किन्तु औवै जैसा लोकप्रिय और कोई नहीं हुआ

है। सरल-सहज भाषा औवै की विशेषता थी। सैकड़ों वर्षों से औवै की कविताएं बच्चों के पाठ्यक्रम में एक अनिवार्य वस्तु हो गई है। स्वर-व्यंजनों के क्रम से बद्ध औवै की सरल कविताएं, जब पढ़ना-लिखना प्रारंभ होता है, तभी से सीखी जाती हैं। बाद में जब बड़े-बड़े ग्रंथों में पांडित्य पाने लगते हैं तब भी औवै की कृतियों से पाठ्य-सामग्री मिल जाती है। औवै को गुजरे कई सौ वर्ष हो गये हैं, परन्तु अपने साहित्य द्वारा वह सदा अमर रही है और रहेगी।

कहा जाता है कि औवै की मां एक अछूत थी। उसके सवर्ण प्रेमी ने यह शर्त की थी कि उसके जितने बच्चे होंगे, वहीं-के-वहीं छोड़ दिये जायंगे। औवै इस अछूत मां और ऊंची जाति के आदमी की पहली संतान थी। मां का हृदय नवजात शिशु को त्यागने को मान नहीं रहा था। उसका दिल फटा जा रहा था। बालिका सरस्वती का अवतार थी। कहते हैं, रोती मां को देखकर उसके मुंह से वाणी निकली :

मत रो, ओ प्यारी मां !
वह शिव जीवित है अभी, मरा नहीं वह,
जिसने स्वेच्छा से खींची है
मम ललाट पर रेख भाग्य की,
कैसी भी हो विपदा, पड़े अकाल,
मुझे उबारने का है उसका भार।

तू चिंता मत कर,
मां, धीरज धर ।　　(१)

छोटी-सी बच्ची को अनाथ पडी पाकर कुछ हरिजनों को दया आई और वे उसे अपने घर ले गये । उन्हींके बीच औवै पली और बड़ी हुई । ऐसे वातावरण में भी उसकी बुद्धि का अद्‌भुत विकास हुआ ।

उस युग के शिक्षित वर्ग में औवै का स्थान सर्वोपरि था । आध्यात्मिक दृष्टि से भी उसका स्तर बहुत ही ऊंचा था । औवै जीवन-पर्यन्त कुंवारी ही रही । उसने संन्यासिन का जीवन बिताया ।

: २ :

ग्रोवै का काव्य

ग्रौवै की कविताग्रों में उसके व्यक्तित्व की स्पष्ट छाप देख सकते हैं। राजा ग्रौर धनिक वर्ग औवै का ग्रादर-सत्कार करने में नहीं चूकते थे, किन्तु ग्रौवै उनसे निर्लिप्त थी। दीन-दलितों के बीच घूमने ग्रौर कविताएं सुनाने में उसको बहुत ही आनन्द मिलता था।

चोल राजा ने एक बार ग्रौवै का स्वागत करते हुए प्रथा के ग्रनुसार पूछा कि उसका ग्रागमन कहां से हुग्रा ? ग्रौवै ने झट कविता सुना दी :

बहुत दूर से ग्राई हूं मैं, राजन् !
तेज चली हूं, बहुत थकी हूं,
पैरों में हो रही ग्रसह्य पीड़ा है।
सींचती है कावेरी जिस भूमि को,
तैरती जहां पानी में मुक्ता-मीन,
रख रहीं मुंह खुला ऊपर की ग्रोर,

पी सकें जिससे
वृक्षों में से टपकते मधु-बिन्दुओं को,
ओ, उस प्रदेश के स्वामी !
मैं भटकती बैरागिन,
मानूं किस देश को अपना
और बताऊं तुम्हें, कहां से आई हूं ? (२)

एक बार एक कृषक की इच्छा हुई कि वह औवै का आतिथ्य-सत्कार करे। उसके लिए बेचारे ने क्या-क्या पूर्व तैंयारियां कीं। परिणाम क्या निकला, इसका विनोदपूर्ण वर्णन औवै ने इस प्रकार किया है :

बैठा वह पत्नी के पास, पोंछ रहा उसका मुंह,
बड़े, यत्न से निकाल उसके जुंए,
संवार रहा प्रेम से केश उसके।
साहस बटोरा, धीरे-से बोला—
"द्वार पर अतिथि है।"
सुनते ही इतना, पहले वह चौंकी,
फिर कांपी,
किया बाद में ऐसा गर्जन
लगा भागने वह बेचारा,
पर थी कहां छोड़नेवाली !
पड़ा पास में सूप उठाया,

किया जोर से उसका पीछा,
ख़ूब खबर ली, तब वह मानी। (३)

एक दूसरा अनुभव लीजिये। वहां की गृहिणी कुछ दूसरे प्रकार की थी। अपने आदमी के कहने पर उसने औवै को खाना परोस तो दिया, किन्तु अनिच्छापूर्वक। औवै कहती है :

हाय, मेरी आंखें करती हैं
देखने से इन्कार।
कांप रहे हैं हाथ मेरे लज्जा से,
नहीं चाहता अच्छा-भला मेरा मुंह खुलना,
टीस रही हैं मेरी हड्डियां—
देख-देख उस खाने को,
जो लाचारी से रख दिया गया है
मेरे सम्मुख। (४)

एक दिन औवै चलते-चलते बारिश में बुरी तरह फंस गई। 'पेन्नर' नदी के किनारे-किनारे वह चल रही थी। नदी के तट पर उसे एक झोपड़ी दिखाई दी। ठंड के मारे शरीर कांप रहा था, कपड़े एकदम भीग गये थे। उसी अवस्था में वह झोपड़ी के अन्दर घुसी। झोपड़ी का मालिक गडरिया बाहर गया हुआ था, लेकिन उसकी दोनों बहनों (अंगवा और संगवा) ने औवै को प्यार से भीतर बुलाया। उसके कपड़े भीगे देखकर अपनी छोटी साड़ियों में से एक निकाल-

कर पहनने को दी। चूल्हे के पास औवै को बिठाकर उसके शरीर को गरमी पहुंचाई और बड़े प्यार से सुगंधित घी के साथ गरम चावल और सरजन की तरकारी खाने को परोसी। खाना एकदम सादा था, किन्तु उनके मन की उदारता में कोई कसर नहीं थी। औवै ने पुलकित होकर गाया :

उन बहनों ने मुझे परोसा
भोजन गरमा-गरम महकता
उन हाथों से, भरे हुए थे,
जो कंगनों से।
बोली, "खाओ जीभर करके।"
डाला घी ऊपर से कसकर।
उन्हें दुख था,
खाना इतना सादा है,
है सब्जी-ही-सब्जी बस,
लेकिन मेरे लिए नहीं था
वह भोजन भर, वह था अमृत। (५)

सरल हृदय औवै ने इस घटना को याद रखा। अपने ऊपर स्नेह दिखानेवालों को ध्यान में रखकर उसने गाया :

बेचारा बारी था चरवाहा,
जब मैं लेने विदा गई

तो पकड़ लिया साड़ी का पल्ला,
बोला,
"मैं न आपको जाने दूंगा।"
पलियानूर के भले कारी ने
कहा, थमाकर मुझे फावड़ा,
"आंओ, हम मिल करें खुदाई।"
बोला सेरमन, "आओ, चलें साथ कैलास !"
कर डाली स्नेह की वर्षा मुझपर
इन तीनों ने।
उन बहनों का प्रेम नहीं था कम,
दे डाली थी नीली साड़ी
मुझे पहनने,
प्रेम-भाव से विगलित होकर। (६)

कृतज्ञता के साथ हास्यरस-पूरित एक कविता का सार देखिये :

नगण्य वैलूर की पूतन ने
मुझे खिलाई दावत बढ़िया,
था उसमें रस घुला प्रेम का,
अमर स्नेह का।
था भोजन में मोटा चावल
और भुने बैंगन का भुरता,

छाछ रही खट्टी इतनी—
करती थी बुदबुद,
पर थी मेरे लिए नियामत,
दुनिया-भर के मूल्य बराबर। (७)

: ३ :

विभिन्न रस-धाराएं

घूमते-घूमते औवै एक बार बहुत थक गई। एक मन्दिर के सामने पैर फैलाकर लेट गई। वहां से गुजरते हुए एक आदमी को यह अच्छा नहीं लगा। चिढ़कर उसने कहा, "ओ बुढ़िया, भगवान के सामने इस तरह कोई लेटता है? उठ, ठीक तरह से लेट।

औवै ने धीरे-से कहा, "सच कहते हो, भाई। मुझे वह दिशा तो दिखा दो, जिसमें ईश्वर का वास नहीं है। मैं उधर ही पैर फैलाकर आराम कर लूंगी। मैं सचमुच बहुत थकी हुई हूं।"

आदमी निरुत्तर होकर चला गया।

देवी-देवताओं को भी औवै के साथ वार्तालाप करने की इच्छा हो जाती थी। कार्तिकेय शिवजी के पुत्र हैं। वह तमिल लोगों के इष्ट देवता हैं। इस प्रदेश के लोग मुरूगन

(सुन्दर) कुमार, षण्मुख और सुब्रह्मयम आदि नामों से कार्तिकेय का संबोधन करते हैं। ऐसी मान्यता है कि युद्ध, प्रेम और युवा लोगों के अधि-देवता होकर पहाड़ों और जंगलों में विचरण करना इनको बहुत ही प्रिय है। कार्तिकेय की इच्छा औवै से बातचीत करने की हो गई। गाय-भैंस चरानेवाले एक किशोर का रूप धारण करके वह उस जामुन के पेड़ के ऊपर चढ़कर बैठ गये, जिसकी ओर औवै चली आ रही थी। इस बार भी वह भूखी थी। पेड़ पर बैठे युवक से उसने पूछा, "मेरे लिए कुछ जामुन तोड़कर फेंकोगे ?"

कुमार तो इसी ताक में थे कि औवै से बोलने का अवसर मिले। बोले, "गरम जामुन चाहिए या ठंडे ?"

औवै ठीक समझ नहीं पाई कि गरम-ठंडे फल क्या होते हैं ! इतना समझ गई कि लड़का मेरा मजाक उड़ा रहा है। यों ही उसने लड़के से कह दिया, "अच्छा गरम ही सही।"

कार्तिकेय ने अच्छे पके जामुन तोड़कर जमीन पर फेंके, जिससे उनमें खूब रेत लग गया। औवै ने चाव से उन्हें उठाया। रेत हटाने के लिए उन्हें फूंकने लगी, तो सहसा उसको सूझा कि लड़के ने क्यों गरम-ठंडे फलों की बात की। ऊपर से लड़का खिल-खिलाकर हँस पड़ा। बोला, "फूंक-फूंककर खाना, मुंह मत जला लेना।"

लड़के की बुद्धि-चातुरी से औवै मुग्ध हो गई, साथ ही पराजय की भावना भी उसके मन में उठी। तब उसके मुंह से जो कविता फूटी, उसका सार इस प्रकार है :

आह, पुरातन यह कुठार
टकराकर कठोर वृक्षों से,
नहीं कभी थी घबराई,
वही आज कोमल कदली से
हार खा गई।
नहीं आयगी नींद मुझे
अब दो रातों तक,
क्योंकि आज हो गई पराजित
मैं इस चरवाहे से,
जो जंगल में काली भैंस
चराता है। (८)

महाराजा लोग औवै की खातिर करने में कोई कसर नहीं रखते थे। उनसे यदि कभी कोई भूल हो जाती थी, तो औवै की टीका से महाराजा लोग भी बचते नहीं थे। एक बार पांड्या के राजा के घर विवाह का अवसर था। औवै दावत खाने गई। वहां के अनुभव का वर्णन उसने इस प्रकार किया है:

सुनो, बताऊं कैसे खाई दावत मैंने
पांड्या के उस राजा के घर

जो विद्वत्ता से भूषित था,
चहल-पहल थी शादी की अति
पर मैं ठुकराई गई इधर-से-उधर।
चिपक रहा था पेट भूख से
पर न मिला मुझको खाने को
चावल का दाना तक ! (९)

यह कविता तमिल में, चार पंक्तियों में, बहुत सुन्दर रची गई है। औवै को किसीसे डर नहीं था। वह डरती भी क्यों ? उसने गाया :

है जिसकी आत्मा उदार,
उसके लिए स्वर्ण है तृणवत,
शूर-वीर को मृत्यु जिस तरह,
जब भी आये,
नहीं अधिक होती है तृण से,
और विवेकी नर को नारी
कहां मूल्य रखती है अपना !
वैसे ही संन्यासी को है
राजा नहीं अधिक तृण से कुछ। (१०)

धर्म-शास्त्रों को औवै बड़ी सरलता के साथ समझाती थी। चार पंक्तिवाली कविता में चारों पुरुषार्थों की औवै ने इस प्रकार व्याख्या की है :

धर्म निवारण है विपत्ति का;
अर्थ वही है जो पाते हम
पापरहित हों,
काम कहेंगे नर-नारी के प्रेम-भाव को,
और ऐक्य होता है उसमें
मन-विचार-कर्मों का।
इन तीनों से बचकर मानव
ध्यान लगाता है जब पर से,
सुलभ उसे तब हो जाती है मोक्ष। (११)

जाति-पांति के बारे में औवै कहती है :

मुझसे पूछो तो लो, सुनलो,
वर्ण जगत में हैं बस दो ही—
एक ऊंच है, दूजा नीचा।
जो ऊंचे हैं, वे करते हैं
मदद निरंतर दुखियारों की।
पर नीचे वे मनुज, न आते
काम किसीके दुःख-संकट में।
यह सच है उतना ही जितना,
सच्चा होता वेद-वाक्य है। (१२)

औवै का सिद्धान्त था :

सब धर्मों की सीख एक ही,
करो भला, औ' बचो कलुष से
आज तुम्हें जो मिली सम्पदा
इस धरणी पर,
वह है प्रतिफल सद्कर्मों का,
जो थे किये पूर्व जन्मों में ।
अतः करो मत पाप,
रहो संलग्न सदा उत्तम कर्मों में : (१३)

औवै के जमाने में भी विभिन्न मतावलंबियों के बीच काफी झगड़े हो जाते थे । उन्हें सुलझाने के लिए औवै कहती थी :

दैवी गुणों से विभूषित तिरुवल्लुवर ने
अपनी कृति 'कुरल' में
तीनों शैव महात्माओं ने 'देवारम्' में
वैष्णव संतों ने 'तिरूवायमोलि' में
'तिरुवको वै' 'तिरुवाचकम' में,
तिरुमूलर ने 'तिरुमंत्रम' में
किया निरूपण एक सत्य का,
एक सीख ही दी है सबने । (१४)

: ४ :

ज्ञान-बोध

गृहस्थी के संबंध में औवै ने बहुत-कुछ लिखा है। एक जगह औवै ने देखा कि गृहिणी सर्वगुण-संपन्न लक्ष्मी जैसी थी और उसका पति था एकदम निरक्षर और मंद बुद्धि। ऐसो बेमेल जोड़ी को देखकर औवै को सृष्टिकर्ता ब्रह्मा पर, जोकि सबके भाग्य का विधाता है, बहुत क्रोध आया। क्रोध के आवेश में उसने कहा :

यदि मैं पा जाऊं ब्रह्मा को,
जिसने बांधा इस हरिणी को
ऐसे जड़ मानव से,
उसके चारों शीश उड़ाकर
भेजूं उसी दिशा में,
जिसमें गया पांचवां सिर है। (१५)

एक अन्य अवसर पर औवै उसी विषय में कहती है :

यदि पत्नी है शीलवती

औ' अपने पति के योग्य,
तो जीवन को सुखी करेगी,
हर हालत में।
लेकिन यदि स्वभाव है उल्टा
तो मत कहो किसी से कुछ भी,
ले लो बस संन्यास। (१६)

औवै की निम्नलिखित मान्यताओं की सच्चाई से कोई इंकार नहीं कर सकता :

सारे दुखों में असहनीय,
अति असहनीय, है निपट गरीबी,
युवा अवस्था में तो उसकी चोट
और भी दुख देती है।
उससे भी बढ़कर दुखदाई
है वह रोग कि जिसका
नहीं कोई उपचार।
उससे भी कठोर है उसका भाग्य,
जो है बंधा हुआ नारी से,
नहीं हृदय में जिसके प्यार।
सबसे अधिक दुःखी है वह नर,
जिसको निर्भर करना पड़ता
अपनी उदर-पूर्त्ति को उसपर। (१७)

औवै ने विवाह नहीं किया। जीवन भर कुंवारी रही। फिर भी वह अच्छी तरह समझती थी कि जीवन में स्त्री का स्थान बहुत ही गौरवशाली और ऊंचा होता है। वह लिखती है :

नहीं तिलक हो जिस ललाट पर
वह है बड़ा अभागा,
नहीं अंश हो घी का जिसमें
वह भी भोजन है क्या ?
है वह सुषमारहित ग्राम,
जिसमें न प्रवाहित सरिता,
जीवन व्यर्थ कि जिसमें कोई
न हो बंधु और भ्राता,
सुख-दुख में जिनका प्रेमल स्वर
रहे सदा इठलाता।
हतभागा है वह घर जिसमें
गृहणी का न कभी हो बासा। (१८)

चरित्रहीन स्त्रियों से दूर रहने का उपदेश देते हुए औवै बड़े ही सरल शब्दों में लिखती है।

है उस नारी का संसर्ग इस तरह,
बेच रही जो तन पैसों में,
जैसे कोई कूदे नद में,

चक्की लेकर निज सहाय को।
इससे मिट जाता है सबकुछ
इस जीवन में,
और न बचता कुछ भी तो है
उस जीवन में।
लुट जाती है पूर्ण सम्पदा
जो है अभी हमारी अपनी
और भूमि में जम जाती है जड़
उन कर्मों की,
जो भावी जीवन में लाते
विपदा-पर-विपदाएं। (१६)

तमिल साहित्य में सब जगह हम हल चलानेवाले किसान की स्तुति देख सकते हैं। उस व्यवसाय को खूब मान दिया गया है। औवै भी कहती है :

बहती सरिता के तट पर खड़ा पेड़
बढ़ता है, ऊंचा जाता है,
और निकट राजा के जीवन
मान, शक्ति से भर जाता है।
लेकिन समझो, एक दिवस
वह तरुवर, वह जन,
दोनों भूमिसात हो जाते हैं।

भूमि जोतता हलवाहा
जीता है जीवन उत्तमतम,
और न कर सकता है,
इस विशाल जगती में कोई
उसकी समता।
उससे इतर कार्य जो भी हैं,
उनमें रहता दोष कुछ-न-कुछ। (२०)

एकबार राजा ने प्रखर बुद्धिवाली औवै से सलाह मांगी कि किस जाति के व्यक्ति को मंत्री चुना जाय। औवै ने उत्तर दिया :

नहीं मिलेगा सही मार्ग यज्ञोपवीत-धारी[1] से,
अगर चुनोगे निज वंशज[2] तो
चैन नहीं पाओगे,
तुला[3] करेगी नष्ट मनुज को,
श्रमिक बनेगा[4] अच्छा मंत्री, बढ़िया साथी,
और करेगा शासन को
सच्चे अर्थों में गरिमामय। (२१)

औवै के कथन का सारांश यह था कि ब्राह्मण मंत्री गड़बड़ी करा सकता है, क्षत्रिय मंत्री रोष वाला होगा और सदा लड़ाइयों की सलाह देता रहेगा, वैश्य अनुचित करों के

१. ब्राह्मण २. क्षत्री ३. वैश्य ४. किसान

लोभ से लोगों को हैरान कर डालेगा, पर किसान मंत्री से ही देश का कल्याण होगा। परिश्रमी लोगों के लिए औवै बहुत सुन्दर वकालत करती थी।

औवै के समय में जन-समाज में शिक्षा को और शिक्षित वर्ग को विशेष महत्व दिया जाता था। इसीको ध्यान में रखकर तमिल कवियों ने बहुत-कुछ लिखा है। शिक्षित-अशिक्षितों के विषय में औवै लिखती हैं :

शाखाएं फैलाए वन में
खड़ा हुआ जो तरुवर,
उसको वृक्ष नहीं कह सकते।
उस अज्ञानी को देखो,
जो पढ़े-लिखों के बीच
नहीं पढ़ पाता उस पाती को,
जो उसके कर-तल पर रक्खी,
समझो, वही मनुज है पेड़। (२२)

तुलना करो नृपति की
ज्ञानीजन से,
विद्याधर का क्षेत्र बड़ा है
राजा के शासन से,
सीमित है राजा की गरिमा

अपने ही घेरे में,
पर पुजता है ज्ञानी जन तो
जग के हर कोने में। (२३)

एक दिन शाम हो गई। औवे को एक सराय में रहना पड़ा। संयोग से वहां एक भूत भी रहता था। भूत एक राजकुमारी का था, जिसने प्रेम में धोखा खाने के कारण आत्म-हत्या कर ली थी। भूत सबको रातभर सताया करता था। औवे ने सोचा—सोया तो जा नहीं रहा, कुछ कविताएं क्यों न रच डालूं ! उस संध्या को लिखी कविताओं में से यह एक है :

ओ भूत, खबर ले उस जन की,
जिसे सुनावें बार-बार कविताएं,
पर न याद रहती है जिसको
एक पंक्ति भी,
जो न एक भी अक्षर पढ़ सकता है,
और न कुछ भी लिख सकता है,
उस दुखिया जननी को भी तू छोड़ न,
जिसने जन्म दिया है उस मूरख को,
जो जगती में करवाता है खूब हँसाई।
ओ मेरे शैतान, सीख तू दे कुछ ऐसी,
याद करें दोनों जीवन भर। (२४)

अशिक्षितों के बारे में इस प्रकार लिखनेवाली औवै शिक्षा के अभिमानी पंडितों को भी चेतावनी देती है :

जब हम ही हों, और न कोई,
तो चिल्ला सकते मनमाना,
किन्तु ज्ञानियों के समूह में
हमें चाहिए चुप ही रहना।
यही इष्ट है, यही श्रेय है।
तोता रट लेता कुछ बातें
और सुनाता उन्हें निरन्तर,
नहीं शर्म आती है उसको
और न थकती उसकी जिह्वा,
पर बन जाती चीख भयंकर
उसकी वाणी,
जब उसको दिखलाई देती
मोटी-सी बिल्ली है आती,
उस पिंजड़े को लक्ष्य बनाती।　　　　(२५)

एक दूसरी कविता का सार देखिये :

देखो, छोटी-सी चिड़िया का
कितना मनहर बना घोंसला,
और जरा देखो उस कृमि को
जिसने निज रक्षा के हित

कर लिया स्निग्ध तन अपना,
उस दीमक को भी तो देखो,
जिसका घर अचरज से भरता,
या देखो वह छोटी मकड़ी,
जो बुनती जाला अति कोमल,
इनकी नक़ल नहीं कर सकता
कोई भी इंसान धरा का,
सबकी अपनी है विशेषता ।
तब न करो अभिमान, बंधु, तुम,
अपनी विद्वत्ता का । (२६)

: ५ :

सुन्दर उपमाए

साहित्य का काम और उदेश्य यह होता है कि उससें जन-सामान्य का चरित्र सुदृढ़ हो। तमिल साहित्यकारों नें इस शिक्षा-पद्धति को खूब अपनाया है। सदाचार, धैर्य, त्याग, स्नेहपूर्ण व्यवहार और दूसरों की संकट के समय सहायता करना, इन गुणों को खूब महत्व दिया है, इनपर खूब जोर दिया है। कवियों ने इन्हीं विषयों को अनेक बार दोहराया है। किन्तु विशिष्ट कवियों की विशेषता यह होती है कि वे शिक्षा की इन बातों को बड़ी सूक्ष्मता के साथ, रुचिकर उदाहरणों को लेकर, बहुत ही रोचक बना देते हैं। औवै की कुछ पंक्तियाँ ऐसी हैं, जिन्हें औवै ही लिख सकती थी। दूसरी भाषाओं में रूपान्तर होने पर उनका मौलिक सौंदर्य अवश्य घट जाता है। चार पंक्तियों की कविताओं में औवै लिखती है :

चित्रकला सम्पादित होती
हाथों के अभ्यास से,

अच्छी तमिल सीख पाते हैं
वाणी के सुप्रयास से,
उत्तम ज्ञान प्राप्त होता है
श्रम-युत बुद्धि-विकास से,
शिष्टाचार सुलभ होता है
दिन-दिन के व्यवहार से,
लेकिन प्रेम, दया, सेवा—
ये गुण मिलते हैं जन्म से। (२७)

हे सुलोचने, पुष्पों से सज्जित, देवी,
सुन, तू मेरी बात।
तीन तरह के प्राणी हैं दुनिया में
सर्वोत्तम हैं वे, जो करते
भला दूसरों का चुपचाप;
मध्यम श्रेणी के वे जन हैं,
जो कहने पर करते काम।
हैं अंतिम श्रेणी में वे नर,
जो हजार कहने पर भी हैं
नहीं हिलाते हाथ।
क्या तुम चाहोगी मिसाल तीनों की ?
तो लो देखो,
कटहल, आम, पादरी के वृक्षों को। (२८)

कटहल फूलों के प्रदर्शन के बिना फल देता है। फूलों

की सूचना के बाद आम के वृक्षों में फल आते हैं। फूलों की बहार के बावजूद पादरी के पेड़ में फल नहीं लगते।

नहीं विजय पाती कठोरता कोमलता पर
जो हाथी के मस्तक को है बींध डालता
वही तीर होता है बेबस विनत कपास पर;
नहीं हथौड़े के प्रहार से जो चट्टान टूट पाती है,
वही वृक्ष की मृदुल मूल के लिए एकदम,
फटकर जगह बना देती है। (२९)

बहुत क्षीण होजाती तरुणी विरह-व्यथा से,
किन्तु बहुत बढ़ जाती है सुन्दरता उससे,
कर-करके उपवास संतजन सुखा डालते हैं निज काया,
पर उससे उनके चेहरे पर कई गुना है, तेज चमकता।
सतत दान करने से धनपति रंक नहीं हो जाता,
उल्टे उसकी यशःकीर्ति में चार चाँद लग जाता,
इसी भांति रण के घावों से शूर-वीर हो उठते सुन्दर,
जैसे शिल्पी के हाथों में हो उठते सजीव जड़ पत्थर। (३०)

अनिश्चित आर्थिक परिस्थितियों में भी अच्छे लोगों का सद्भाव वैसे-का-वैसा ही वना रहता है और छोटे दिलवाले लोग संपन्न अवस्था में भी अपना स्वभाव नहीं छोड़ते। औवै कहती है :

नहीं दूध का स्वाद अग्नि है कम कर पाती,
नहीं शंख के श्वेतवर्ण को जला भस्म कर पाती,
उसी तरह तुम यत्न करो चाहे जितना, हे भाई,
नहीं बना सकते अमित्र को किसी तरह सुखदाई,
जबकि उच्च आत्मा की रहती
युग-युग तक प्रभुताई। (३१)

देखिये, नीचे के पदों में औवै ने कितनी सुन्दर उपमाएं दी हैं :

मान और मर्यादा के हित
शूरवीर दे देते प्राण,
पर न झुकाते शीश शत्रु से,
पाने को वे अपना त्राण।
मूल्यवान पत्थर के खम्बे,
भार नहीं सह पाते,
तब वे टुकड़े-टुकड़े होकर
टूट तुरत हैं जाते।
क्या तुमने देखा है उनको
कभी मुलायम होते
या असह्य बोझे के नीचे
झुकते या मुड़ जाते ? (३२)

निम्न स्तर के लोगों का
गुस्सा न कभी है मिटता।
पर कुछ ऐसे जन भी हैं
जिनका गुस्सा दब जाता—
ठीक उस तरह, जैसे सोना
टुकड़े होकर, तपने पर,
है एकरूप हो जाता।
पर सन्मार्गी आत्माओं का
क्रोध इस तरह होता,
जैसे घाव तीर का जल पर
क्षण भर में मिट जाता। (३३)

चंदन को कितना भी घिस लो
और क्षीण कर डालो,
पर वह सदा सुवासित होगा,
कुछ भी तुम कर डालो।
शूरवीर राजा का सबकुछ
भले नष्ट हो जावे,
नहीं क्षुद्र उसका दिल होगा
कोई उसे सतावे। (३४)

दुर्जन कितना क्यों न कष्ट दे डाले उनको,
किन्तु विवेकी पुरुष बचायेंगे उस जन को।

देखा तुमने मनुज चलाते
कस-कसकर कुल्हाड़ वृक्षों पर,
पर तरुवर देते बदले में
पीड़क को शुचि शीतल छाया
और बचाते उसे धूप से
जबतक टिकती उनकी काया । (३५)

सूख भले ही सरिता जावे,
तप्त बालुका ही रह जावे,
फिर भी उसका स्रोत न चुकता,
पानी प्यासे को मिल जावे ।
सुजनों को अभाग्य कितना ही
क्यों न कष्ट में डाले,
क्यों न सभीकुछ छीन उन्हें
निर्धन एकदम कर डाले,
लेकिन फिर भी उनके घर पर
याचक यदि आजावे
तो कुछ भी हो, पर न वहां से
खाली हाथों जावे । (३६)

तमिल की आचार-संहिता में याचकों को कुछ-न-कुछ देना बहुत ही आवश्यक समझा जाता था। लेकिन साथ ही याचक-वृत्ति को तुच्छ भी माना गया है। औवै ने अपनी प्रारंभिक पुस्तकों में लिखा है, "भीख मांगना हेय है।" कुछ

भी उद्योग किये बिना आलसी बनकर मत फिरो।

अन्य कवियों ने भी दान की प्रशंसा करते हुए भी, मांगने की वृत्ति को प्रोत्साहन नहीं दिया। एक कविता देखिये :

वातराज ने कहा कि तुम कल को आजाना,
अन्य राज ने कहा, बाद में फिर तुम आना,
किन्तु साफ शब्दों में बोले एतराज यों,
"मेरे लिए नहीं है संभव
तुमको कुछ भी देना।"
गांठ बांध लो तुम इस सच को,
एतराज की बात कहीं अच्छी है
उन दोनों से। (३७)

सार्वजनिक कार्यों के लिए चंदा इकट्ठा करनेवाले औवै के इस विचार से पूर्णतया सहमत होंगे। औवै कहती है :

बिना याचना के जो देता
वह है बड़ा महान
किन्तु मांगने पर जो देता
कह सकते हैं उसे उदार।
बार-बार चक्कर लगवाकर
जो देता है, वह कहलाती

पैर तोड़ने की मजदूरी,
लेकिन कुछ ऐसे भी तो हैं,
जो उतने पर भी न पिघलते।
ऐसे पुरुष रसातल जाते
और साथ संतति ले जाते। (३८)

बहता पानी है नहरों में
सिंचित करने खेत धान के,
लेकिन उनके मग में उगती घास
पा जाती जल उस प्रवाह से।
यदि इस धरती पर बसता है
एक सुजन भी
तो उल्लसित मेघ बरसाते
पानी उसकी खातिर,
लेकिन लाभ सभीको मिलता। (३९)

: ६ :

उपदेश

मित्रता किसे कहते हैं, किसको मित्र चुनना चाहिए, इसके बारे में औवै का कहना है :

मत मानो यह सदा कि
संबंधी वे अपने,
जिनसे नाता जुड़ा रक्त का;
बीमारी जो पैदा होती साथ तुम्हारे
क्या वह नहीं मारती तुमको ?
दूर वनों में उगी बूटियां,
क्या न लाभ पहुंचातीं तुमको ? (४०)

सारस उड़ जाते तड़ाग से
जब पानी की बूंद न रहती।
इसी भांति मित्रों की टोली
भाग्य रूठते छोड़ भागती।
किन्तु मित्र कुछ ऐसे भी हैं,

जो तड़ाग के 'कोट्टि' 'ग्राम्बल'
ग्रौर 'नेयतल' के समान,
नहीं छोड़ते साथ कभी,
सहते हैं कष्ट ग्रपार। (४१)

पुराने जमाने में तमिल प्रदेश के गांवों में लोगों का मजबूत संगठन होता था। झगड़े के मामले लोगों के सामने ग्राते थे ग्रौर हल भी किये जाते थे। ऐसे समय पर जो साक्षी बनते हैं, उन्हें बिल्कुल ईमानदार रहना चाहिए, यह बताते हुए औवै लिखती हे :

जहां पक्ष हो न्याय-युक्त
ग्रौ' बैठे हों न्यायी निष्पक्ष।
वहां ग्रगर कोई निर्णायक
वशीभूत होकर लालच के,
ऊंचे स्वर से बोल-बोलकर,
करवा दे खारिज दावे को,
तो वह निश्चय वरण करेगा
मृत्यु निपूता
ग्रौर बंधु-बांधव भी उसके
डूब जायंगे बिन संतति के। (४२)

जब हो न्याय साथ दुर्बल के,
तब जो मिल जाता

विरोध के महत् पक्ष से,
और बिचारे शक्तिहीन का
दावा खारिज करवा देता,
नहीं बचेगा वह अन्यायी
पीड़ित के शापों से,
और लुप्त होगा धरती से
बिन बच्चों के। (४३)

जो लोगों के बीच बोलता
वाणी नीति-विरोधी
उसका घर हो जाता है,
भूतों का डेरा,
और उपजती घास विषैली,
कांटोंभरी झाड़ियां।
उसके गृह में
आ बसती देवी अमंगला
और भयंकर विषधर काले। (४४)

गृहस्थियों को औवै उपदेश देती है कि वे संभलकर चलें और विवेकपूर्ण व्यवहार का पालन करें :

गाली देते हुए दान देने से
कहीं अधिक अच्छा है दान न देना,

श्रौर विरोधी नारी तो
बदतर है पिशाच से ।
बिना-प्रेम से भरी मित्रता की निस्वत है
कहीं वांछित निपट शत्रुता,
श्रौर गरीबी के जीवन से
मृत्यु कहीं है श्रेयस्कर । (४५)

एक बार श्रौवै को ऐसी जगह ठहरना पड़ा, जहां भूत रहता था। तब आलसी व्यक्तियों को उद्देश्य करके उसनें गाया :

आसमान में मेघ खड़े हों
जब वर्षा करने को,
श्रौर धरा उद्यत हो
बढ़िया फल देने को,
ताल श्रौर नदियां जब हों
पानी से पूरित,
तब यदि कोई मूर्ख निरुद्यम
बैठ कोसता अपनी किस्मत,
तो हे भूत, खबर ले उसकी,
क्योंकि नहीं वह किसी काम का । (४६)

व्यापारी लोग श्रौवै की इन पंक्तियों से लाभ उठा सकते हैं :

सुनो ध्यान से मेरी बात--
आमदनी से अधिक खर्च है, जो जन करता
वह निश्चय ही अपयश का भागी होता है।
भ्रांत-चित्त वह हो जाता है
और जहां भी वह जाता है
चोर नाम रखवाता है।
ऐसी गलित अवस्था में वह
अपनी नेक संगिनी से भी
दुष्कर्मी बन जाता है। (४७)

वास्तव में धान से है
फूटता अंकुर,
किन्तु यदि है नष्ट हो जाता
कवच उसका,
नहीं रहती उगाने की
तनिक भी शक्ति उसमें।
हाल मानव का यही है
शक्ति हो कितनी भले ही
मिल नहीं सकती सफलता,
है अगर धारण नहीं करता कवच वह
मान-संयम का। (४८)

एक और उपदेश सुनिये :

करो मित्र की खूब प्रशंसा
जब वह न हो तुम्हारे पास
और करो गुणगान गुरू का
सदा, सब जगह ।
अपनी प्यारी नारी को
बोलो तुम मीठे वचन उस घड़ी,
जब वह करती हो विश्राम पलंग पर,
किन्तु सराहो पुत्रों को मन-ही-मन
और कर्मचारी को तब
जब काम कर चुका हो वह पूरा । (४६)

: ७ :

जीवन-दर्शन

कार्य के परिणामों से अविचल होकर हमें शांत-भाव से उद्योगों में लगना चाहिए। सफलता प्राप्त होती है तो हमें हर्ष से पागल नहीं हो जाना चाहिए। उसी प्रकार काम बिगड़ जाय तो शोकग्रस्त होना ठीक नहीं। औवै के तत्वज्ञान का भी यही सार है। वह लिखती है :

खूब डुबाओ 'नाली'[1] को
नीचे सागर में,
पर न भरेगा
चार नालियों का वह पानी,
इसी भांति हे सखी, सुनो तुम,
भले सम्पदा हो मनचाही
और तुम्हारा जीवन-संगी भी वैसा हो,

---

१. अनाज नापने का पात्र

किन्तु मिलेंगे सुफल तुम्हें उतने ही,
जितने तुमने पूर्वजन्म में (५०)
बोये होंगे बीज पुण्य के।

चाहे जितनी करो विनय तुम
असंभाव्य संभव होने का नहीं कभी भी,
पर जो होने को है वह होकर मानेगा,
भले न चाहो और टलाओ तुम कितना भी।
फिर भी अविवेकी जन होते दुःखी
और करते चिन्ता हैं,
जबतक मृत्यु नहीं आ जाती। (५१)

समझो इसको, यह शरीर है
विष से भरे जन्तुओं का घर
और इसे घेरे रहते हैं रोग बहुत-से,
ज्ञानी पुरुष जानते है यह,
इसीलिए वे बिना किसी शिकवा-शिकवत के
करते जीवन-यापन ऐसे
जैसे कमल-पत्र पर पानी। (५२)

तमिल साहित्य में उदर की क्षुधा-पूर्ति के लिए जो अनेक उपाय हैं, उनके बारे में व्यंग्य-कविताएं खूब हैं। औवै लिखती है।

मेरे उदर अरे, तुम हो
दु:खों से भरी पिटारी,
मैं कहती हूं, त्याग अन्न-जल
एक दिवस को,
पर तुम सुनते कहां हमारी !
अगले दिन मैं कहती हूं,
तुम खा लो कई दिनों का,
पर तुम कहां मानते हो इसको भी !
नहीं कभी तुम अनुभव करते
मम विपदा को,
मेरे लिए बड़ा मुश्किल है
साथ तुम्हारे जीवन जीना। (५३)

वह आगे लिखती है :

झुकते हैं हम आगे उनके,
जो हैं नहीं वांछित प्राणी
और भटकते, याचक बनते,
पार महासागर कर जाते।
हम करते हैं बहुत दिखावा,
पराधीन कर अन्य जनों को
राज्य चलाते हैं हम अपना।
हैं करते गुणगान न जाने किस-किस नर का,

और पटकते निज आत्मा को
गहन-गह्वर में।
यह करते किसलिए
कभी सोचा है तुमने ?
क्योंकि चाहिए पेट अधम को
चावल के मुट्ठी-भर दाने (५४)

क्षुधा-पूर्ति के लिए पेट की
थोड़ा-सा चावल काफी है,
तन ढंकने के लिए चाहिए
चार हाथ कपड़ा बस;
लेकिन अगणित चिन्ताएं
हमको घेरे रहती हैं,
यह क्रम तबतक चलता है
जबतक मृत्यु नहीं आ जाती,
माटी की गगरी की नाईं
अंत नहीं हो जाता।
इस दुनिया में अंधे मानव
नहीं सीखते कुछ भी
और बिताते जीवन सारा—
उद्वेलन-चिन्ता में। (५५)
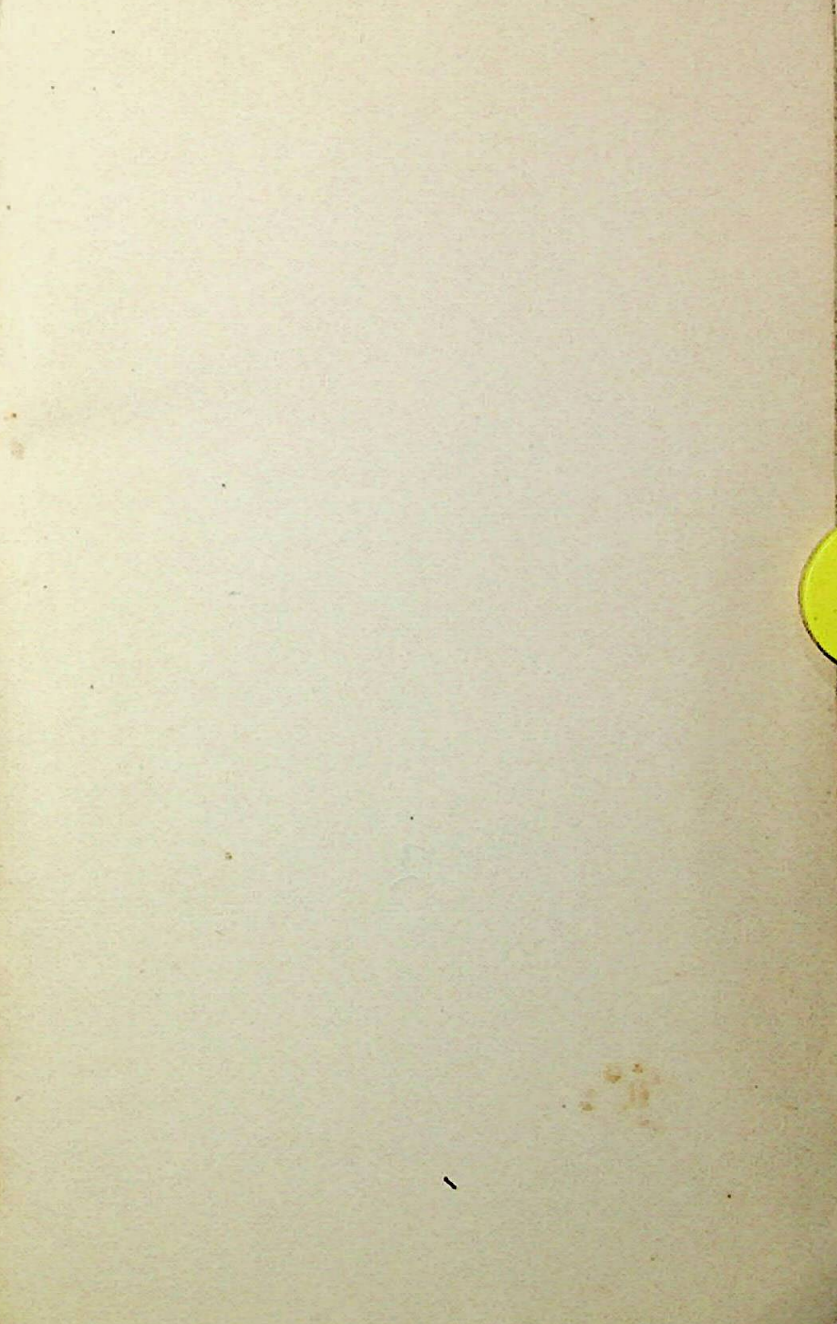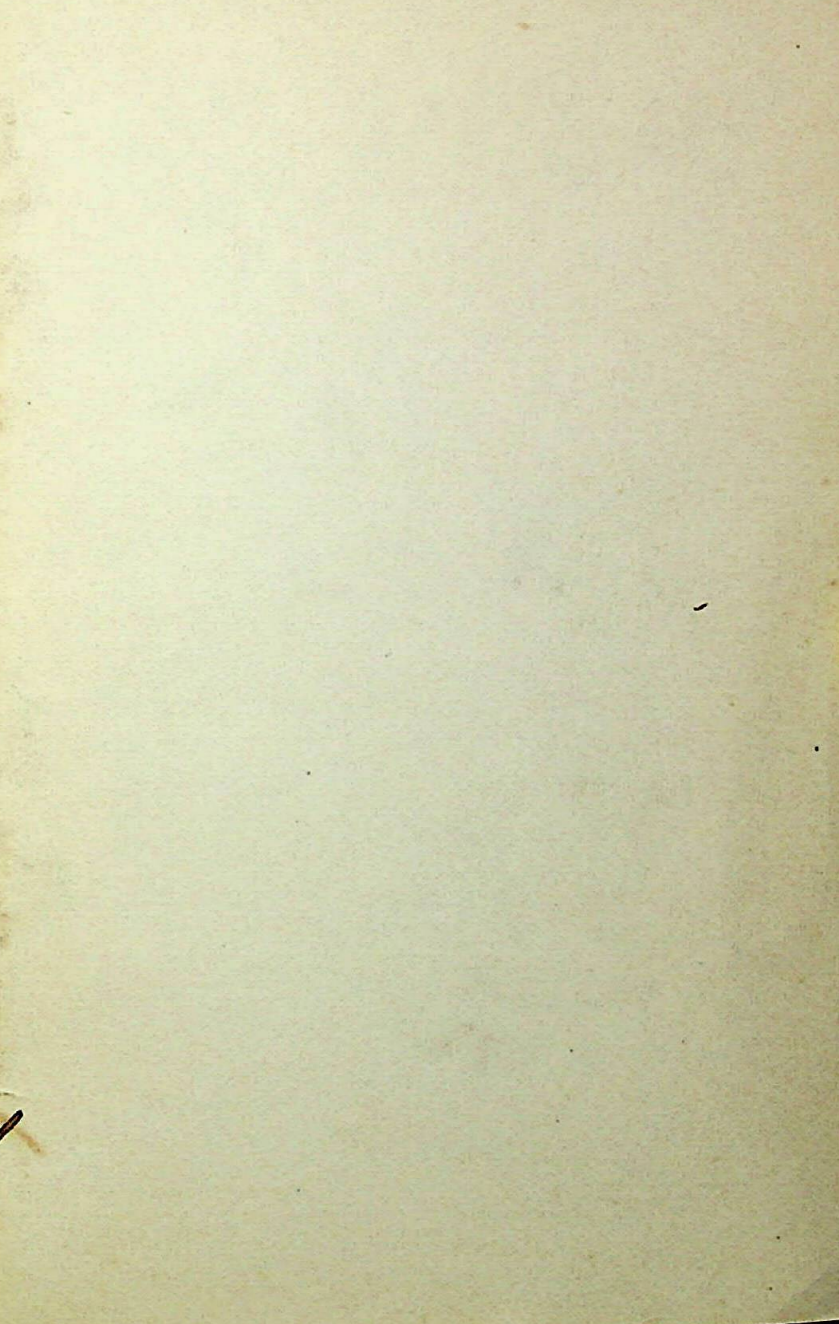
लेखक की 'मंडल' से प्रकाशित अन्य पुस्तकें

१. दशरथनन्दन श्रीराम
२. राजाजी की लघु कथाएं
३. महाभारत कथा
४. शिशुपालन
५. कुब्जा सुन्दरी
६. भगवान हमारा मित्र